सन्त रैदास : दलित अस्मिता के नायक

डॉ सुजीत कुमार,

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड कॉमर्स,
नेताजी नगर, नई दिल्ली–110023

भारत के समाज से हम सब वाकिफ हैं। इस समाज में 'जाति' सबसे महत्वपूर्ण है। इंसान सब कुछ त्याग सकता है लेकिन वह जाति का त्याग नहीं कर सकता। भारत के समाज में व्यक्ति के अधिकार उसके कर्म के आधार पर न होकर, जाति (जन्म) के आधार पर माना गया है। ऊँचे कुल में जन्म लेने वाला व्यक्ति कितना ही दुराचारी क्यों न हो पर उसे आदरणीय ही माना जाएगा और निम्न जाति में जन्म लेने वाला कोई व्यक्ति अपने अथक परिश्रम के बल पर उच्च स्थान प्राप्त कर लेता है तो भी उसे सदैव अपमान का ही सामना करना पड़ता है।

दलित जाति पर होने वाले प्रत्येक अत्याचार के लिए उसके पुनर्जन्म के कर्म बताए गये हैं। यह बताने वाला भी एक विशेष वर्ग का होता है। वह अपने वेद, पुराण, स्मृतियो, रामायण, महाभारत...के हवाले से इसे निर्धारित करता है। उसके अनुसार ये सारे वेद–पुराण स्वयं ब्रह्मा ने लिखे हैं। इन्हीं सब बातों का आधार बनाकर यह वर्ग गरीब, दलित, मजदूर वर्ग का पीढ़ियों से शोषण करता चला आ रहा है। दलित अपने अज्ञान के कारण उन सब यातनाओं को सहने के लिए मजबूर रहा है। यह व्यवस्था भारत के समाज में ही पाई जाती है जो मालिक और गुलाम जैसी भयंकर प्रथा से ज्यादा खतरनाक है। यह आज भी समाज ही नहीं बल्कि इंसानियत के लिए भी घातक है।

इस देश के "सामाजिक इतिहास में क्रांति और प्रतिक्रांति की लड़ाई पुराने जमाने से चली आ रही है। अस्पृश्यता को मिटाने वाला हर कदम क्रांति कहलाएगा।" बौद्ध, आजीवक, चार्वाक.... आदि ने जो मशाल जलायी वह रविदास, कबीर, नानक, नामदेव आदि संतों से होते हुए फुले, पेरियार और बाबा साहब की मानस संतानों ने जला रखी है। यह लड़ाई जातिवाद को मिटाने और समानता, स्वतन्त्रता, बंधुत्व की भावना को कायम करने लिए है।

प्राचीनकाल में गौतम बुद्ध ने अपने उपदेशों के माध्यम से लोगों में समानता लाने का प्रयास किया। गौतम बुद्ध के उपदेशों में मानवता और समानता की भावना महत्वपूर्ण है। वे मनुष्य को मनुष्य बनने का उपदेश देते थे। महात्मा बुद्ध के बाद मध्यकाल में अपनी ओजस्वी वाणी से सभी धर्मों तथा वर्गों के लोगों को फटकार लगाने वाले कबीर एवं संत रैदास आदि प्रमुख थे। संत रैदास और कबीर ने सभी तरह के वाह्य–आडम्बरों, अंध–विश्वासों का खुलकर विरोध करते हुए समाज में जाग्रति लाने का प्रयास किया। दलित जतियों के संतों ने समाज और अध्यात्म के दोनों स्तरों पर अपना संघर्ष खड़ा किया। साथ ही उन्होने "सामाजिक क्षेत्र में सबसे बड़ा यही काम किया कि श्रम और श्रमिक को प्रतिष्ठा दिलाई।"

रैदास जिसने अपनी वाणी में बार–बार कह 'रैदास चमार' और "कह रैदास खलास चमारा" कहकर स्वयं को चमार घोषित किया है। यह किसी क्रांति से कम नहीं है। अपनी जाति पर इस तरह का गर्व कहीं और नहीं मिलता है। यह

गर्व श्रम के महत्व से जुड़ा हुआ है। शिक्षा की स्थिति अपने समकालीन कबीर की भाँति ''मसि कागद छुयो नहीं कलम गही नहि हाथ'' जैसी रैदास की भी थी। सत्संग ही इनकी पाठशाला थी। संत कर्मदास ने इस संबंध में ठीक ही लिखा है–

''पंडित गुनी कोई टिंग न बिठाये।
वेद शास्त्र किन्हुँ न पढ़ाये।।
अंतरमुखी जाउ कीन्हों ध्याना।
चारिउ जुगनि का पायो गियाना।।
कागद कलम मसि कछु नाही जाना।
सतगुरु दीन्हो पूरन गियाना।।"

अधिकांश सर्तों की भाँति रैदास भी बहुश्रुत व्यक्ति थे। उन्होंने अपना संपूर्ण ज्ञान सत्संग, भ्रमण और मनन द्वारा अर्जित किया था। जैसा कि डॉ पद्म गुरुचरण सिंह ने भी लिखा है कि ''इन्हें आध्यात्मिक जान सत्संग और स्वाध्ययन और व्यक्तिगत अनुभव द्वारा प्राप्त हुआ था।'' हमारा विचार है कि किसी भी युग की शिक्षा का जो उद्देश्य है वह रैदास के जीवन में पूर्णरूपेण फलीभूत हुआ था। उन्होंने 'रहने और कहने की कला' को पूरी तरह से जान लिया था–

''चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ। गुरु की सादि ज्ञान का अक्षर।
बिसरत सहज समाधि लगाऊँ। प्रेम की पार्टी, सुरति कर लेखनि।"

संत रैदास जी के समय की परिस्थितियाँ अत्यन्त विषम थीं। जिस प्रकार का पाखण्ड, भेदभाव उस समय फैला था, उन सबका रैदास जी ने डटकर विरोध किया। पराधीनता में व्यक्तित्व का विकास नहीं होता मनुष्य दबकर जीता है। उसकी सारी शक्तियों का हनन होता रहता है। रैदास ने पीड़ित और शोषितों को संत की भाषा में ललकार कर कहा–पराधीनता पाप है। पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़ डालो। तुम्हें भगवान ने उसी तरह आजाद पैदा किया है जैसे कि उच्च जाति वालों को किया है। यह उनकी चालाकी और मक्कारी है कि उन्होंने तुम्हें आगे नहीं बढ़ने दिया। तुम्हें अपने चंगुल में फंसा लिया और तुम पर पराधीनता थोप दी। यह बात तुम्हें समझनी होगी –

"पराधीनता पाप है, जान लेऊ रे मीत।
पराधीन रैदास सों, कौन करै है प्रीत।"

संत रैदास ने समाज में रहने वाले सभी प्राणियों के लिए एक समान जीवन को महत्वपूर्ण बताया। जन्म के आधार पर जाति की घोषणा करने वालों को वे समाज का दुश्मन मानते थे। ऐसे लोग छोटी जाति में पैदा हुए अनेक प्रतिभावान लोगों को नष्ट करने और ऊँची जाति में पैदा हुए अनेक ओछे विचारों वाले व नवीन प्रवृत्ति वाले लोगों को समाज के गले मढ़ने के अपराधी हैं। उनका विश्वास था कि नीची जाति में पैदा हुआ मनुष्य यदि ऊँचे कर्म करे तो निश्चय ही यह ऊँचा उठ जाता है और ऊँची जाति में पैदा हुआ यदि कुकर्म करे तो महानीच हो जाता है। जाति मनुष्यता के लिए खतरा है। हम इसी में उलझ कर अपना सर्वस्व लूटा रहे हैं। जाति ही समानता और बंधुत्व नष्ट किए हुए है। वे शुद्ध सामाजिक रूप से इन बातों को कहते हैं –

'रैदास सुकरमन करन से, नीच ऊँच हो जाए।
करई कुकरम जे ऊँच भी, ते महानीच कहलाय।
जात जात में जात है ज्यों केलन में पात,
रविदास मनुख न जुर सकें जो लोन जात न जात।
जात पांत के फेर महिं, उरझि रह्यो सब लोग,
मानुषता कूँ खात हई, रविदास जात कर लोग।"

संत रैदास अपनी हर बात स्पष्ट और दृढ़ता से रखते हैं। रैदास जी ने अपनी वाणी के द्वारा चार्वाक आदि नास्तिकों तथा बौद्धाचार्यों की भांति वेदों, अवतारों, ब्राह्मणों आदि की धज्जियाँ उड़ाई थी। वे एक आदर्श समाज की कल्पना करते हैं। जिसे वे 'बेगमपुरा शहर' नाम देते हैं। जिसमे किसी तरह का कोई दुख न हो। जिसमे सब समान हों। कोई भेद–भाव न हो। एक ऐसा शहर यहां कोई छोटा–बड़ा न हो, कोई किसी का शोषण न करे–

"अब हम खूब वतन घर पाया, ऊँचा खेर सदा मन भाया ।

'बेगमपुरा' शहर को नाऊँ, दुख अन्होह नहीं ते ठाउँ ।

ना तसवीस खिराज न मात, खोफ न खता न तरस जवाल ।

काइम दाइम सदा पतिशही, दाम न साम एक–सा आही ।

आवादान सदा मशहूर, जहां गनियाँ बसे मापूर ।

सैर करै ज्यों–ज्यों मन भावै, हरम महल मोहिं को अटकावे ?

कह 'रैदास' खलास चमारा, जो उस सहर सो मीत हमारा ।"

तुलसी दास के 'रामराज्य' में वर्णाश्रम धर्म केंद्र में है, लेकिन संत रैदास की चिंता शुद्ध भौतिक समृद्धि और मानवीय थी। वे लिखते हैं–

"ऐसा चाहूं राज में, जहां मिले सबन को अन्न।

छोट बड़ो सब सम बसै रैदास रहे प्रसन्न।"

रविदास जी समाज की बनावट को अच्छी तरह समझते थे। वे जानते थे की बिना एकता के शोषण से मुक्ति नहीं है। इस लिए दलित समाज को संगठित होने के लिए जगाते हैं। वे जानते थे कि संघे शक्ति कलयुगे। वे यह भी भली–भाँति जानते थे कि हम संगठित होकर ही शोषकों का मुकाबला कर सकते हैं। दलित समाज को संगठित करने के बाद गुरु रविदास जी हमें गुलामी की बेड़ियां तोड़कर फेंक देने के लिए ललकारते हैं। वे गरीब जनता का आवाहन करते हैं –

"सत संगत मिल रहिए, माधो जैसे मधुप मखीरा।'

'पराधीनता पाप है, जन लेहु रे मीत।"

रैदास किसी भी माध्यम से एक ही बात कहते हैं। यह मानव प्रेम की बात है। इसलिए उन्होने निर्गुण भक्ति का मार्ग चुना। डॉ धर्मवीर के अनुसार ' सगुण और निर्गुण में मुख्य भेद सामाजिक है।...इस सामाजिक भेद में सगुण भक्त वर्णाश्रम की समाज व्यवस्था को मानता है और निर्गुण भक्त प्रेम को आधार बनाता है।' उन्होने कहा है कि निर्गुण भक्ति का रास्ता मनुष्य से प्रेम का रास्ता है–

"वन खोजो पी ना मिला, वन में प्रीतम नाहिं,

रविदास पी हम बसे, रहियो मानव प्रेमी माहि।"

हिन्दू समाज की वर्ण व्यवस्था चातुर्वर्ण्य व्यवस्था रही है। इसमे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के चार वर्ण हैं। रैदास ने इस पूरी वर्ण व्यवस्था के खिलाफ लड़ाई लड़ी। इस प्रकार रैदास ने वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था का विरोध किया। वहीं पर उन्होंने इसकी नई व्याख्या भी प्रस्तुत की। इसके बाद उन्होंने स्पष्ट घोषणा कर दी कि कोई भी व्यक्ति जन्म के कारण ऊँच–नीच नहीं हो सकता, क्योंकि मनोवांछित जन्म लेना तो किसी के भी बस की बात नहीं। वे जाति की श्रेष्ठता को नकारते हुए मानवीय श्रेष्ठता को स्वीकार करते हैं –

"उंच कुल के कारने ब्राह्मण कोय न होय,

जो जनहै ब्राह्मण आत्मा, रविदास कह ब्राह्मण सोय।

'दीनदुखी के हेत जो वारे अपने प्रान,
रविदास उह नर सूर को सच्चा क्षत्री जान।'

'सांची हाटी पैठ कर सौदा साँचा दे,
तकरी तोल साँच की, रविदास वैस होय।'

'रविदास जो अति पवीट्ट है, सोई सूदर जान,
जऊ कुकरमी असुध जन तिन्हहि न सूदर मान।"

इसका कारण उनकी दृष्टि में यह है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्र सभी को बनाने वाला वह एक ही 'सिरजनहार' हार है। उस एक ही बंद का विस्तार यह सारा संसार है। प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा में उसी परमात्मा का अंश विदयमान है, फिर किस आधार पर ब्राह्मण को श्रेष्ठ तथा शूद्र को निकृष्ट ठहराया जाए। इससे स्पष्ट है कि कोई जन्म से श्रेष्ठ नहीं है बल्कि वह अपने कर्म से श्रेष्ठ है। जाति का कोई बंधन नहीं है। मनुष्यता ही श्रेष्ठ है और यह श्रम से जुड़ी हुई है। श्रम कि महत्ता सर्वोपरि है।

मध्यकालीन भारत अंधविश्वासों के घनघोर अँधेरे में साँस ले रहा था, कुछ बेबुनियाद रुढ़ियों ने उसमें और सड़न पैदा कर दी थी। सत रैदास ने तत्कालीन रुढ़ियों के प्रति विद्रोह किया, इसलिए उन्हें सामाजिक क्रांति का अग्रदूत कहने में कोई अतिसयोक्ति नहीं है। भारत का दुर्भाग्य रहा है कि यहाँ पर जाति ही व्यक्ति का सामाजिक स्तर निर्धारित करती रही है। उसे ऊँच और नीच माने और मनवाने पर बाध्य करती रही है। संत रैदास इसलिए ऐसी जाति प्रथा को जो व्यक्ति–व्यक्ति को जोड़ती नहीं तोड़ती हो को रोग मानते हैं।

समस्त मिथ्याचारों तथा आडंबरों का संत रैदास ने इटकर विरोध किया। उनकी मान्यता थी कि ''मन चंगा तो कठौती में गंगा''। वस्तुतः मन की शुद्धता ही सर्वोपरि है उन्होंने समस्त बुराइयों पर एक–एक कर सशक्त चोट की। समाज सुधारक के नाते उन्होंने समाज की सही नब्ज को पकड़ा।

उपर्युक्त समस्त विवेचन के उपरांत निष्कर्षतः कहाँ जा सकता है कि संत रैदास का जीवन और काव्य उदात मानवता के लिए आवश्यक सदाचारों के शाश्वत सैद्धांतिक मूल्यों का अक्षय भंडार है, जिसमें से प्रत्येक वर्ग और स्थिति तथा मानसिक स्तर पर व्यक्ति अपने लिए सुंदर सुंदर मोतियों का चुनाव सुगमता से कर सकता है। छुआछूत तथा वर्ण व्यवस्था का विरोध कर सामाजिक स्वास्थ्य के लिए अचूक औषधि तैयार की। वहीं पर मानव मात्र को निर्गुण पूजा के साथ–साथ श्रम के प्रति आस्था का भी उपदेश दिया। इससे भी बड़ी बात उस युग के और किसी संत कवि के काव्य में दिखाई नहीं देती, वह है उनकी स्वतंत्र चेतना। उन्होंने तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक शोषण के खिलाफ आवाज उठाई थी और एक ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें ये सब विषमताएँ न हो। प्रत्येक व्यक्ति श्रम करके जीविकोपार्जन करे। इन संपूर्ण तथ्यों पर गंभीरता से विचार करने के उपरांत हम कह सकते हैं कि संत रैदास के काव्य का वैचारिक आधार बहुत दृ ट तथा उसकी भावात्मक पृष्ठभूमि बहुत ही विस्तृत तथा सामाजिक महत्व की है जिसकी प्रासंगिकता सम–सामयिक संदर्भों में भी असंदिग्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ धर्मवीर– गुरु रविदास, पृष्ठ–5, समता प्रकाशन, दिल्ली–1998
2. वही, पृष्ठ–7,
3. वही, पृष्ठ–10,

4. श्री चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु– संतर प्रवर रैदास साहब, पृष्ठ– 15
5. संत रविदास विचारक और कवि– डॉ. पद्म गुरुचरन सिंह, पृष्ठ संख्या 22
6. संत रविदास और उनक काव्य– स्वामी रामानंद शास्त्री एवं वीरेंद्र पांडेय, पृष्ठ संख्या 84
7. वही, पृष्ठ–85
8. डॉ धर्मवीर– गुरु रविदास, पृष्ठ–67, समता प्रकाशन, दिल्ली–1998
9. वही, पृष्ठ–10,
10. वही, पृष्ठ– 23
11. आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद– युग प्रवर्तक संत गुरु रविदास, पृष्ठ– 47–48
12. डॉ धर्मवीर– गुरु रविदास, पृष्ठ–20, समता प्रकाशन, दिल्ली–1998
13. वही, पृष्ठ– 45

Copyright © 2016, Dr. Sujeet Kumar. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.